Introduction

॥ प्राक्कथन ॥

हमारे यहाँ कहा गया है - "काव्य शास्त्र विनोदेन कालोगच्छति धीमताम्" और "साहित्य संगीत कलाविहीनः । साक्षात पशुःपुच्छ विषाणहीनः ।" काव्य और शास्त्र का आनंद लोकोत्तर है । जिसने इस आनंद का अनुभव किया है उसे अन्य दुन्यवी या भौतिक चीजों की एषणा नहीं रहती । वह सदैव आनंद के क्षीर सागर पर डोलता - लहराता रहता है । गुरूदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने कही क्हा था कि जिसने काव्य और शास्त्र दोनों को पढ़ा है, उसका भाग्य सर्वश्रेष्ठ है, जिसने केवल काव्य को पढ़ा है, शास्त्र नहीं उसके भाग्य को हम मध्यम प्रकार का कह सकते है, किन्तु जिसने केवल शास्त्र पढ़ा है और साहित्य या काव्य नहीं, उसका भाग्य तो मंदातिमंद है । अतः परिपूर्णता तो काव्य और शास्त्र दोनों के अध्ययन अनुशीलन से आती है, यह तो असंदिग्ध रूप से हमारी चेतना का विस्तार होता है । हम जीवन और जगत की परिपूर्णता को प्राप्त करते है । एक व्यक्ति बिना कुछ पढ़े-लिखे एक जिंदगी में कुछेक जीवानुभवों को प्राप्त कर सकता है, परंतु काव्य या साहित्य के अध्ययन के द्वारा वह देश-काल की सीमाओं को त्यागकर विश्वभर के लोगों के जीवानुभवों से साक्षात्कार कर सकता है । यह मैं इसलिए लिख रही हूँ कि मेरी आलोच्य लेखिका मैत्रेयी पुष्पा संस्कृत की विदूषी होने के नाते काव्य और शास्त्र उभय के अनुभवों से समृद्ध और संपन्न है ।

आदिवासियों का एक अस्त्र है "बूमरेंग" इसे चलाने पर वह अस्त्र निर्धारित लक्ष्य को सर करके पुनः चालक के पास आ जाता है । मैत्रेयी ने भी शास्त्र से बूमरेंग का काम लिया है । एसे अनेक कारणो से मैत्रेयी पुष्पा मेरी प्रिय लेखिका रही है । एम. ए. की कक्षाओं में मैने कई-कई बार देसाई सर और डॉ. भरत मेहता साहब (गुजराती विभाग) के मुँह से मैत्रेयी की चर्चाओं को सुना है । तभी से मैंने अपना मन बना लिया था कि यदि अवसर मिला तो में अपना पी-एच.डी. उपाधि हेतु शोधकार्य मैत्रेयी पुष्पा को लेकर करुँगी । शौधकार्य के धैर्य, लगन और उसकी विषय प्रतिश्रुतता को जाँचने-परखने का सद्भाग्य से इस निकष पर में खरी उतरी और अंततः "मैत्रेयी पुष्पा की आत्मकथाओं के परिप्रेक्ष्य में उनके उपन्यास साहित्य का अध्ययन" विषय को लेकर मेरा नामांकन दि. १९-११-२००८ को संपन्न हुआ ।

पंजीकरण पूर्व पाण्डे मेडम ने मुझे कुछ शोध प्रबंधों को देख जाने का परामर्श दिया । हंसा मेहता लाईब्रेरी में जाकर मैंने हिन्दी के कुछ प्रकाशित लब्ध प्रतिष्ठित शोध-प्रबंधों को जाँचने - परखने का उपक्रम किया । उसके उपरांत उन शोध-ग्रंथों को ध्यान में रखते हुए उन्होंने मुझे शोध-विधि और शोध-प्रक्रिया के कुछ महती तत्वों से अवगत कराया । "नामूलमलिख्यते" के सिद्धांत को समझाया । शोध-प्रबंध और किसी विषय पर लिखे स्वतंत्र ग्रंथ में क्या अंतर है यह भी स्पष्ट किया । संदर्भ संकेत या पाद टिप्पणी को लेने की पद्धति को समझाया । शोध-प्रबंध में "उपसंहार" और "ग्रंथानुक्रमणिका" की

उपादेयता को बताया। आदिवासियों का एक अस्त्र है "बूमरेंग" इसे चलाने पर वह अस्त्र निर्धारित लक्ष्य को सर करके पुनः चालक के पास आ जाता है। मैत्रेयी ने भी शास्त्र से बूमरेंग का काम लिया है।

ऐसे अनेक कारणों से मैत्रेयी मेरी प्रिय लेखिका रहीं है। एम.ए की कक्षाओं में मैंने कई-कई बार देसाई सर और डो.भरत मेहता साहब (गुजराती विभाग) के मुंह से मैत्रीय की चर्चाओ को सुना है। तभी से मैंने अपना मन बना लिया था कि यदि अवसर मिला तो में अपना पी-एच.डी. उपाधि हेतु शोधकार्य मैत्रेयी पुष्या को लेकर करुँगी।

सन् २००६ में महाराजा सयाजीराव विश्व विधालय के हिन्दी विभाग से मैंने एम.ए की उपाधि प्रथम श्रेणी में आकर उतीर्ण की तदुंपरात जीविका को ध्यान में रखते हुए बी.एड कर लेना उचित समझा। अतः सन् २००८ मैंने इसी युर्निवसिटी से बी.एड. की उपाधि को ८१% तथा मेथड़ (हिन्दी) मे एवोर्ड के साथ संप्राप्त किया। इतनी व्यावहारिकता को साध लेने के उपरांत मैं अपने पसंदीदा क्षेत्र में (शोधक्षेत्र में) अपनी पसंदीदा लेखिका पर कार्य करने को सन्नद्ध हुई। मार्गदर्शक के चुनाव का और उनकी सहमति का महाप्रश्न सामने आया। अंततः इस महाप्रश्न का समाधान डॉ.शन्नो पाण्डेय के रुप में मेरे सामने आया। प्रथमतः तो वे कई-कई बार नकारती रही, शायद यह उनका अपना तरीका था, शोधकर्ता के धैर्य, लगन और उसकी विषय प्रतिश्रुतता को जाँचने-परखने का सदभाग्य से इस निकष पर में खरी उतरी और अंततः "मैत्रेयी पुष्पा की आत्मकथाओं के परिप्रेक्ष्य में उनके उपन्यास साहित्य का अध्ययन" विषय को लेकर मेरा नामांकन दि. १९-११-२००८ को संपन्न हुआ।

समकालीन हिन्दी लेखिकाओं में मैत्रेयी पुष्पा एक बहुप्रतिष्ठित, बहुचर्चित एवम् बहुपठित लेखिका के रुप में जानी जाती है। लेखिका का जीवन ही संघर्ष की एक अनवरत यात्रा है। पारिवारिक, सामाजिक, पितृसत्तात्मक, व्यवस्था की उपज ऐसे कई प्रकार के संघर्षों से शैशवकाल से ही माँ-बेटी (कस्तूरी और मैत्रेयी) को दुपरदू होना पड़ा है। जिसे हम "कस्तूरी कुंडल बसै" और "गुड़िया भीतर गुड़िया" में दृष्टिगत कर चुके थे। जीवट जुझारुपन, अपराजेय आस्था और जिजीविषा मानो मैत्रेयी के पर्याय बन चुके है। साहित्य के लिए भी लेखिका को कम संघर्ष नहीं करना पड़ा। पिछले दो दशकों मे मैत्रेयी ने अपने लेखकीय व्यकित्व को एक ऐसा रुप दिया है, जिसके कारण लेखिका कई समकालीन लेखिकाओं के लिए भी हसद और इर्ष्या का कारण बन चुकी है। मैत्रेयी के साथ (कुछ हद तक प्रभा खेतान के साथ भी) बहुचर्चित के साथ बहुविवादित विशेषण भी जुड़ जाता है। अतः दो लेखिकाओं पर हिन्दी साहित्य के "गोशिपजगत" में सबसे ज्यादा विवाद हुए है, फतवेबाजी हुई है। इसके कई कारण हैं। दोनों लेखिकाओंनें कम समय में अपना साहित्यक कद इतना बढ़ा लिया है कि कुछ लोगों को वह असंभव-सा लगता है। यहाँ पिछली सदी के महान वैज्ञानिक एवम् चिंतक आईस्टाईन की निम्नलिखित सुकित

वाकय मेरी स्मृति में बरबस उभर आया है – In the middle of difficulty lies opportunity – अर्थात् जहाँ अनेक मुसीबते होती हैं, वहाँ उन्हीं मुसीबतों से कोई रास्ता भी निकलता है। अतः दोनों लेखिकाओं के लेखन का समयपट संक्षिप्त-सा जरुत लगता है, परंतु उनेक अध्ययन-अनुशीलन और संघर्ष का रस्ता बड़ा दीर्ध रहा है। जिस पर चलते हुए उन्होंने जीवानुभवों की पूंजी को अर्जित किया है। दोनों के लेखन का प्रारंभ कविता से हुआ है। प्रभाजी तो अपनी अन्य साहित्यिक कृतियों के साथ कविता में भी कलम चलाती रही है। प्रभाजी तो अपनी अन्य लोहा उन्होंने मनवाया है। परंतु मैत्रेयी अपने लेखकीय जीवन के प्रारंभ में ही समझ गई कि कविता उनका क्षेत्र नहीं है। उनकी ऊर्जा को कथा-साहित्य का रस्ता ही माफिक आ सकता है। और उसके पीछे कुछ हद डॉ. राजेन्द्र यादव भी जिम्मेदार हैं। मैत्रेयी पुष्पा को, उनकी ऊर्जा को देखते हुए, उनके बुंदेखण्डी ग्रामीण जीवन के अनुभवों को देखते हुए दिशा- निर्देश करने का श्रेय हंस संपादक राजेन्द्र यादव को जाता है। "छी-छी अंगूर खट्टे हैं।" वाली उकित को सार्थक करनेवाली हिन्दी की कतिपय लेखिकाओं को रोजन्द्र यादव सदी के "खलनायक" भले लगते हों पर नायकों के साथ खलनायकों की भी एक निश्चित भूमिका रहती है। भला "रावण" के बिना रामायण और "दुर्योधन" के बिना महाभारत की कल्पना की जा सकती है ? यह अकारण नहीं है कि दोनों ही महाकाव्यों इन दोनों के संहार के बाद फीकापन आ जाता है। यहाँ यादवजी की तुलना रावण या दुर्योधन से करने की हमारी मंशा नही है, क्योंकि हमारे लिए तो वे समकालीन हिन्दी जगत के खलनायक नहीं अपितु नायक हैं। आज नहीं तो कल लोगों को स्वीकार करना पड़ेगा कि नारी लेखिकाओं और दलित लेखिकों की एक समूची पीढ़ी को तैयार करने का सारस्वत कर्म यादवजी ने किया है जो उनको भारतेन्दु, प्रेमचंद तथा डॉ. सुरेश जोशी (गुजराती) के समीप ला खड़ा करता है।

अन्य क्षेत्रों की भाँति साहित्य और कलाएं भी संयोग के तत्व के महत्व को नकार नहीं सकते। राजेन्द्र का दिशा- निर्देश न मिलता तो मैत्रेयी भी शायद लीज-लिजी भावुकता वाली एक छायावादी कवयित्री –मंचीय कवयित्री बनकर रह जाती। इतनी बड़ी, इतनी महान लेखिका न बन पाती। यह अकारण नहीं है कि हिन्दी कथा जगत के बहुत से सुधी-आलोचक मैत्रेयी को प्रेमचंद के बाद की एक सशक्त लेखिका मानते हैं। जिसने ग्रामीण जीवन की ज़मीनी हकीकत को दस्तावेजी रुप दिया है।

मैत्रेयी की नारी गुप्तजीवाली अबला नारी नहीं है, प्रसादजीवाली श्रद्धा या देवी भी नहीं है, वह एक मानवी नारी है। अपनी तमाम तमाम अशिक्तयों और सशक्तियों के साथ। "इदन्नमम्" की "मंदा" हो या "चाक" की "सारंग" या "अल्माकबूतरी" की अल्मा इन नारियों ने बेचारगी के अभिशाप को ऊखाड फेंका है। कुछ काव्य पंक्तियाँ स्मृतिपटल पर उभर रही हैं – "बेचारा शब्द लब्जे हमदर्दी नही / गाली है, गाली है, गाली / नही बनूँगा बेचारा / क्योंकि" बेचारा बनना टूटना हैं / और मैं ही टूट गया तो कितने ही टूट

जाएगें बनने से पहले ।" (बिजली के फूल पृ. १६) मैत्रेयी की नारियाँ भी टूटना नहीं जानती, खूनी लड़की है, संघर्ष करती हैं । परिस्थितियों का सामान् डटकर करती हैं । और जीवन के कुरुक्षेत्र को पीठ नहीं दिखाती । यही कुछ बातें है, जिसके कारण मैं पुष्पा यादव, इस मैत्रेयी पुष्पा के पीछे पागल हुई जा रही हूँ । और बता दू ? मैत्रेयी पुष्पा भले ही बाह्मण कुल में पैदा हुई हों उनका शैशव और किशोरावस्था की परवरिश तो यादव परिवार में ही हुई है । कई उच्चकुलीन संभ्रात परिवारों के बड़े कटु अनुभव बालिका या किशोरी पुष्पा को हुए हैं ।

ऊपर हम बता चुके हैं कि हिन्दी के फतवावादी गोशिपनुमा आलोचनाओं में मैत्रेयी पुष्पा और प्रभा खेताना दोनों के संदर्भ में बहुत कुछ भला –बुरा कहा गया है । महात्मा गांधी विश्वविधालय के कुलपति तथा समकालीन कथाकार डॉ. विभूति नारायण राय (भूत की प्रेमकथा के लेखक) ने तो "छिनाल" तक कह ड़ाला । उनका कथन है "इधर की लेखिकाओं में यह होड़ मची हुई है कि कौन कितनी बड़ी छिनाल है और उनकी आत्मकथाआँ को "कितने बिस्तर में कितनी बार" जैसे शीर्षक देने चाहिए" । भले ही उन्होंने किसी का नाम नही लिया परंतु इनका इशारा स्पष्टतया कृष्णासोबती, मैत्रेयी पुष्पा तथा प्रभाखेतान की ओर है । इस बात का जब बबाल हुआ तो उन्होने अपने लीपा पोतीनुमा प्रत्युतर भी दिए, क्षमायाचना भी की, पर तीर जो निकल चुका उसका क्या ? कोई कौंचपक्षिणी आहत और लहूलूहान हुई उसका क्या ? वस्तुतः बकौल राजेन्द्र बौख्लाहट है । उनकी मर्दवादी सोच है । नारी के विषय में अभी तक पुरुष लेखक बेबाकी से लिखते रहे । ऋषभचरण जैन से जनेन्द्रकुमार, निर्मलवर्मा, कृष्णा बलदेव वैद, मुरली मनोहर जोशी महेन्द्र भल्ला वगैरह जो लिखते रहे तब किसी की भौंहें नहीं तनी और जब नारियाँ उनके द्वारा सुनिश्चित दायरों से बाहर निकल नारी मन की बात वर्जनाओं को नकारते हुए लिखने और कहने लगी तो उनका लेखकीय साहस चूक गया और बौखलाहट में तबदील हो गया । किसी को छोटा बनाना हो , करार जवाब देना हो तो कला और साहित्य में (बल्कि किसीभी क्षेत्र में) बड़ी-रेखा को खींचना पड़ता है, न कि किसी भी रेखा को काटना । कइयोंने तो यहाँ तककहा कि मैत्रेयी का लेखन यादवजी का लेखन है । यादवजी की दृष्टि हो सकती है । दिशा-निर्देश हो सकते हैं, पर मैत्रेयी-मैत्रेयी ही है ।

यादवजी स्वयं कई बार कह चुके हैं कि उनका लेखक अब चूक गया है । न लिखने के कारणों की बड़ी लंबी चौड़ी बहसें वे चालते रहे हैं । ऐस एक चूका हुआ लेखक "इदन्नमम्" और "चाक" जैसी रचनाओं को कैसे लिख सकता है ? और यदि लिख सकता तो क्या उनको अपना नाम न देता ? प्रेमचंद मटियानी और रेणु के बाद मैत्रेयी की गणना एक सशक्त लेखिकाओं में होती है, यही लोगों को काटने को दौड़ रहा है । जो भी हो इतना तो निश्चित है कि समकालीन नारी-विमर्श मैत्रेयी पुष्पा और प्रभा खेतान के बिना अधूरा है । अपने यहाँ कहा गया है "गद्यं कवीनां निकषम वंदति" अर्थात्

गद्य कवियों की कसौटी है । हम निर्दिष्ट कर चुके हैं कि मैत्रेयी प्रथमतः कविता (पद्य) लिखती थी किन्तु बाद में अपने अनुभवों तथा कुछ हितैषियों के परामर्श से वह गद्य तथा कथासाहित्य की ओर उन्मुख हुई । फलतः उनके इस प्रकथानात्मक गद्य में हमे कविता अपने पूरे लालित्य के साथ उपलब्ध हो रही है । उपन्यासों के गद्य में यदि काव्य (कविता) ढूँढ़ना हो तो मटियानी, निर्मलवर्मा, अज्ञेय, जैनेन्द्र आदि के कथात्मक गद्य को देखा जा सकता है । इनेमें मैत्रेयी पुष्पा का नाम भी शामिल किया जा सकता है । कुछ लोग समझते हैं कि गद्य लिखना बड़ा आसान है, परंतु यह उनकी भूल है । हां, सामान्य सतही गद्य लिखना आसान है, परंतु काव्यात्मक गद्य लिखना टेढी खीर है । बात जब गद्य की खूबसूरती की चल पड़ी है, ते डॉ. राजेश जोशी की निम्नांकित गद्य पंकितयाँ देखिए, जिन्हें वे निशाचर की उक्तियाँ कहते हैं –

"रात और दिन बनानेवाले की खोपड़ी अगर सीधी होती और ठीकठाक काम कर रही होती तो उसने राते जागने और भटकने के लिए बनायी होती और दिन सोने के लिए । जिसने रतजगे नहीं किए रात का आसमान नहीं देखा, आसमान में तारे नहीं देखे, गश्त करनेवाले सिपाहियों से बहाने नहीं बनाए । आधी रात के बाद, लौटने पर जिसके घर के दरवाजे अंदर से बंध नहीं हो गए जो रात गुजारने के लिए कभी ना कभी स्टेशन नहीं गया, जिसने स्टेशन जाकर रात में गुजरनेवाली रेल-गाड़ियो से झाँकते मुसाफिरों को हाथ नही हिलाएँ, प्लेटफोर्म की चाय नहीं पी, उसके सामने लेखक या कलाकार बनने के अलावा, दुनिया के हर काम रस्ते खुले हैं ।"

(किस्सोकोताह : पृ :.३६)

आत्मकथाओं के उपरांत मैंने उन आत्मकथाओं के परिप्रेक्ष्यमें मैत्रेयी के उपन्यासों "इदन्नमम्", "चाक", "झूलानट", "बेतवा बहती रही", "विजन", "कहीं ईसुरी फाग", "अल्मा कबूतरी"... का गहन अध्ययन और अनुशीलन किया है ।

शोधप्रबंध के सुचारु संगठन हेतु मैंने उसे निम्नलिखत सात अध्यायों में विभक्ति किया है ।

(१) प्रथम अध्याय : विषय-प्रवेश

(२) द्वितीय अध्याय : हिन्दी आत्मकथा परिभाषा, विभावना और विकास

(३) तृतीय अध्याय : "कस्तूरी कुंडल बसै", का विश्लेषणात्मक अध्ययन ।

(४) चतुर्थ अध्याय : "गुड़िया भीतर गुड़िया" का विश्लेषणात्मक अध्ययन ।

(५) पंचम अध्याय : मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों का विश्लेषणात्मक अध्ययन ।

(६) षष्ठ अध्याय : आत्मकथाओं के परिप्रेक्ष्य में मैत्रेयी के उपन्यासोंका विश्लेषण एवम् मूल्यांकन।

(७) सप्तम् अध्याय : उपसंहार।

हमारा यह शोध प्रबंध मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों पर है। अतः प्रथम अध्याय में हमने उपन्यास विषयक कई जरुरी मुद्दों की पडताल की है; जिनमें उपन्यास की परिभाषा उसके विभिन्न रुपबंधो की यात्रा, पूर्वप्रमेचंदकाल, प्रेमचंदकाल, प्रेमचंदोत्तरकाल, स्वातंत्र्योत्तरकाल, साठोत्तरी उपन्यास, समकालीन उपन्यास तथा हिन्दी उपन्यास में मैत्रेयी पुष्पा का योगदान आदि आदि की गणना कर सकते हैं। उपन्यास की परिभाषा के निष्कर्ष के रुप में व्याख्यायित किया गया है कि उपन्यास एक यथार्थधर्मी विधा है। यथार्थधर्मिता उसका प्राणत्व है। हिन्दी कथा- साहित्य में प्रेमचंद का स्थान मेरुदंड के सामन है। फलतः औपन्यासिक विकास की चर्चा के नाना सोपानों में प्रेमचंद के नाम को केन्द्र में रखा गया है। हिन्दी उपन्यास का उद्‌भव १९ वीं शताब्दी के उतर्राद्ध से माना जाता है। अतः सन् १८७८ से १९१८ तक (पूर्व प्रेमचंदकाल), १९१८ से १९३६ (प्रेमचंद काल) और १९३६ से आधावधि तक के काल को प्रेमचंदोतर काल के नाम से अभिहित किया गया है। पुन : यह प्रेमचंदोत्तरकाल, स्वातंत्र्योत्तरकाल, साठोतरी उपन्यास, समकालीन उपन्यास आदि में विभक्त हुआ है। इनमें पीछे की दो संज्ञाएँ काल-विषयक विभावना को लेकर चलती हैं। इनमें पीछे की दो संज्ञाएँ काल-विषयक विभावना को लेकर चलती हैं। साठोत्तर उपन्यास सन् ६० से लेकर सन् ८०-८५ तक माना जाता है, किन्तु यहाँ एक तथ्य ध्यातव्य रहे कि साठोत्तरी उपन्यास उक्त कालसीमा का उपन्यास तो होगा पर इतने मात्र से वह साठोतरी उपन्यास नही हो जाएगा। उसमें साठोत्तरी मानसिकता और चेतना का होना निहायत जरुरी है। सन् ८५ से अधावधि तक के उपन्यास समकालीन उपन्यासों के अतर्गत आते हैं, किन्तु यहाँ भी ध्यान रहे उनमें समकालीन चेतना का होना अत्यंत आवश्यक रहेगा। हमारा शोध- प्रबंध मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों पर है और उसकी विशद चर्चा परवर्ती अध्यायों में होगी अतः यहाँ बहुत संक्षेप में मैत्रेयी पुष्पा के योगदान को रेखांकित किया गया है।

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों का अध्ययन एवम् अनुशीलन हमें उनकी आत्मकथाओं के परिप्रेक्ष्य में करना है। अतः दूसरे मुद्दों की पड़ताल की है। दूसरे अध्याय में हमने आत्मकथा- विधा की पड़ताल की है। यह आवश्यक इसलिए हो गया है कि साहित्यकी अन्य विधाओं पर तो काफी कुछ लिखा गया है, परंतु आत्मकथा विधा पर बहुत कम लिखा गया है। अतः इस अध्याय मैं हमने आत्मकथा की परिभाषा को देते हुए उसकी विभावना को स्पष्ट किया है। यहाँ हमने आत्मकथा लेखन के भयस्थानों को भी संकेतित किया है और प्रमाणित किया है कि आत्मकथा लेखन किसी नट के रस्सी पर चलने से

कम मुश्किल नहीं है। इसी अध्याय के अंतर्गत हमने आत्मकथा साहित्य की विकासयात्रा को भी निरुपित किया है। तदुंपरात मैत्रेयी पुष्पा की आत्मकथाओं "कस्तूरी कुंडल बसै" ओर "गुड़िया भीतर गुड़िया" पर बहुत संक्षेप में प्रकाश डाला है, क्योंकि परवर्ती अध्यायों में उसकी विशद् चर्चा होनेवाली है।

तृतीय और चतुर्थ अध्याय में हमने मैत्रेयी पुष्पा की दोनों आत्मकथाओं "कस्तूरी कुंडल बसै" और "गुड़िया भीतर गुड़िया" पर क्रमशः विचार किया है। यहाँ इन दोनों आत्मकथाओ का विशद् विश्लेषण और अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। आत्मकथाओं सभी अध्यायों का सार संक्षेप देते हुए उनमें निहित घटनाओं और स्थलों का विशदब्यौरा प्रस्तुत किया है। ये आत्मकथाएँ वह जमीन है, जहाँ से मैत्रेयी पुष्पा का कलाकार एक आकार ले रहा था। दोनों आत्मकथाओं को देख जाने पर सहज की यह प्रतीति होती है कि जीवट, जूझारुपन लगन, धुन, जिजीविषा, प्रभुति में मैत्रेयी यदि बीस है तो कस्तूरी (मैत्रेयी की माँ) इक्कीस ठहरती है। कस्तूरी चाहती थी कि उनकी बेटी पढ़ लिखकर आला अफ़सर बने , परंतु मैत्रेयी का ध्यान पढने-लिखने के बदले इतर प्रवृतियों में अधिक रहा। कस्तूरी चाहती थी कि उसकी बेटी अपनी तमाम शक्ति पढ़ने में लगा दे और जीवन में एक निश्चित मकाम हासिल करने के बाद ही शादी ब्याह जैसी बातों पर विचार करें। बर अक्स इसके मैत्रेयी का ध्यान शुरु से ही लड़कों की ओर ज्यादा रहा और शादी की ललक भी उसे ज्यादा रही। कस्तूरी चाहती थी कि मैत्रेयी खेरापतिन दादी, लौंगसीरी बीबी और कलावती चाची जैसी स्त्रियों से दूर रहे। जबकि मैत्रेयी का मन इनमें ही सबसे ज्यादा रमता था। मैत्रेयी के कथा साहित्य में जो लोक-साहित्य, लोक-कथाएँ, लोकगीत और मिट्टी की गंध हमें उपलब्ध होती है, उसकी जमीन यहाँ से तैयार हो रही थी। ऊपर हमने बताया है कि माँ बेटी की प्रवृतियाँ, सोचने की दिशाएँ विपरीत रही हैं। इसके पीछे कई मनोवैज्ञानिक कारण हैं। उन कारणों की चर्चा हमने यथेष्ठ स्थान पर की है। इन आत्मकथाओं के विश्लेषण से यह प्रमाणित होता है कि इनके तीन चतुथाँश हिस्सेमें इन घटनाओं का ब्यौरा है जिनसे मैत्रेयी अपने जीवानुभवों की पूंजी कतरा... कतरा इकट्ठा कर रही थीं और एक चतुथाँश अंश में मैत्रेयी के कुछ उपन्यासों की भूमिका भी निंदिष्ट की गयी है।

पंचम् अध्याय मैं हमने मैत्रेयी के उपन्यासों का विश्लेषणात्मक एवम् बहुआयामी अध्ययन प्रस्तुत किया है। इन उपन्यासों में "इदन्नमम्", "चाक", "अल्मा कबूतरी", "विज़न", "बेतवा बहती रही", "कही ईसुरी फाग"... आदि की परिगणना कर सकते हैं, किन्तु इनमें भी "इदन्नमम", "चाक", "अल्मा कबूतरी" जैसे उपन्यासों को विशेष रुप से लिया गया है। उक्त आत्मकथाओं में भी इन उपन्यासों की निर्माण प्रक्रिया के संदर्भ में काफी कुछ बताया गया है। "इदन्नमम्" वह उपन्यास है, जिससे मैत्रेयी पुष्पा की पहचान हिन्दी की एक सशक्त लेखिका के रुप में होती है। "इदन्नमम्" के समांतर ही सुरेन्द्रवर्मा का "मुझे चाँद चाहिए" उपन्यास आया था। आलोचकों ने इन दोनों उपान्यासों में निरुपित

नारी – विमर्श को लेकर पर्याप्त चर्चा की है । हालांकि इन दोनों उपन्यासों की जमीन अलग-अलग है । रचनाकारों के दृष्टिकोण भी अलग-अलग है । अतः इन दोनों को एक लाठी से हाँकना उपयुकत नही होगा । हालांकि अनेक प्रतिष्ठित लेखकों ने "इदन्नमम्" के उक्त उपन्यास की तुलना में इक्कीस ही ठहराया है । "इदन्नमम्" के संदर्भ में डॉ. राजेन्द्र यादव की निम्न लिखित टिप्पणी को अनदेखा नहीं किया जा सकता –

"बऊ (दादी), प्रेम (माँ) और मंदा.. तीन पीढियों की यह बेहद सहज कहानी तीनों को समानांतर भी रखती है और एक-दूसरे के विरुद्ध भी । बिना किसी बड़बोले वक्तव्य के मैत्रेयी ने गहमागहमी से भरपूर इस कहानी को जिस आयासहीन दंग से कहा है, उसमें नारी –सुलभ चित्रात्माकता भी है और मुहावरेवार आत्मीयता भी । हिंदी कथा रचनाओं की सुसंस्कृत सटीक और बैरंगी भाषा के बीच गाँव की इस कहानी को मैत्रेयी ने लोक-कथाओं के स्वाभाविक ढंग से लिख दिया है, मानो मंदा और उसके आस-पास के लोग खुद आपनी बात कह रहे हों- अपनी भाषा और लहजे में, बुदेलखंड़ी लयात्मकता के साथ ... अपने आसपास घरघराते क्रेशरों और ट्रेकटरो के बीच । मिट्टी पत्थर के ढोकों या उलझी डालियों और खुरदुरी छाल के आसपास की सावधान छँटाई करके सजीव आकृतियाँ उकेर लेने की अद्‌भूत निगाह है मैत्रेयी के पास लगभग "रेणु" की याद दिलाती हुई । गहरी संवेदना और भावनात्मक लगाव से लिखी गई यह कहानी बदलते उभरते "अंचल" की यातनाओं, हार-जीतों की एक निर्व्याज गवाही है... पठनीय और रोचक ।" (राजेन्द्र यादव "इदन्नमम्" के द्रितीय मुखपृष्ठ से)

मैत्रेयी का दूसरा उपन्यास "चाक" सचमुच में ही पाठकों के चित को चाक करने में सक्षम है । ग्रामणी जीवन में जो टुच्ची राजनीति घुस गई है, उसका गहरा रंग भी यहाँ दृष्टिगोचर होता है, पर इसके साथ ही साथ चलती है ग्रामीण जीवन में पलनेवाली प्रेम-कहानियाँ । जिनमें "सारंग" और "श्रीधर" की प्रेमकहानी पाठक के दिलो-दिभाग पर छा जानेवाली है । प्रेमचंद के बाद नगरीय जीवन के उपन्यासों का जो सिलसिला शुरु हुआ था, वहाँ ग्रामीण जीवन की मस्ती रसभरी कहानियाँ, लोक-गीत और लोक-गीत और लोक-कथोओं की लयात्मकता एक सिरे से गायब थी । जो बाद में "रेणु" के कारण आपूर्त हुई थी, रेणु की इसी परम्परा को "चाक", "अल्मा कबूतरी", "कही ईसुरी फाग" जैसे उपन्यासो में मैत्रेयी ने आगे बढ़ाया है । "बहुत पहले डॉ. रांगेय राधव ने" कब तक पुकारू ? में "करनटों" के जीवन को चित्रित करने का प्रयास किया था । लगभग उसी प्रकार का प्रयास मैत्रेयी ने अल्मा-कबूतरी में किया है जिसमें बुंदेलखण्ड के ग्रामणी इलाकों के कबूतरा जन जाति के लोगों से पाठकों का परिचय करवाया है । इस प्रकार के उपन्यास ही मानवीय अनुभवों और मानवीय चेतना को एक व्याप देते हैं । जहाँ पाप-पुण्य के सतही ख्याल पानी के बुलबुलों की भाँति फूट जाते हैं ।

षष्ठ अध्याय में हमने यह दिखाने की चेष्टा की है कि किस तरह मैत्रेयी जी के उपन्यासों में उनके जीवनानुभव गूथित-अनुगूथित हुए हैं । उपर्युकत आत्माकथाओं में वर्णित जीवन संघर्ष और उनमें रसा-बसा जीवानुभव यहाँ मैत्रेयी की सहायता में आया है । थोड़े से वर्षों में मैत्रेयी जी ऐसे-ऐसे बृहदकाय, उपन्यास कैसे लिख गयीं उसका प्रत्युत्तर हमें यहाँ उपलब्ध होता है । लेखक दो तरह के होते है । एक वह जो जैसे-जैसे अनुभव प्राप्त होते हैं, उनको उपन्यासों और कहानियों में ढालते जाते है । प्रेमचंद, नागार्जुन, मटियानी आदि लेखक इसी प्रकार के है, दूसरा लेखक इसी प्रकार के हैं,दूसरा लेखन के मैदान में उतरते हैं । रेणु और मैत्रेयी इस कोटि में आते है । प्रस्तुत अध्याय में हमने यह विश्लेषित करने का प्रयास किया है कि देशकाल या परिवेश, चरित्र घटनाएँ जो आत्मकथाओं में वर्णित हुई हैं । उनके उपन्यासों में कलात्मक ढंग से संयोजित हुई हैं । आत्मकथाओं में जिया हुआ जीवन मैत्रेयी की बहुत बड़ी पूंजी है, जिसे उन्होंने अपने उपन्यासों में निवेशित की है ।

सप्तम् अध्याय "उपसंहार" का है । जिसमें हमने समग्र शोध-प्रबंध के सार-संक्षेप को प्रस्तुत करते हुए शोध-प्रबंध पर आधारित कतिपय निष्कर्षों को रखा है । यहाँ बहुत संक्षेप में शोध-प्रबंध की उपादेयता को दर्शाते हुए भविष्यत् संभावनाओं को भी संकेतित किया है ।

यह शोध-प्रबंध हमने हमारी मार्गदर्शिका डॉ. शन्नो पाण्डेय द्वारा निर्देशित शोध-प्रक्रिया और शोध-प्रविधि के अनुसार संपन्न किया है । प्रत्येक अध्याय के प्रारंभ में प्रास्ताविक के भीतर अध्यायगत मुद्दों का उल्लेख किया गया है । अध्याय के अंत में समग्रावलोकन की प्रक्रिया द्वारा अध्यायगत निष्कर्ष निकाले गए हैं । यह अध्यायगत निष्कर्ष शोध-प्रबंध के निष्कर्षों तक पहुँचने में सहायक होते हैं । अध्याय के अंत में हमने संदर्भानुक्रम रखा है, जिसमें लेखक का नाम, पुस्तक का नाम और पृष्ठ संख्या दर्ज किए गए है । शोध-प्रबंध के अंत में कुछ परिशिष्टों के अंतर्गत हमने सहायक ग्रंथ सूची-ग्रंथानुक्रमणिका (Bibliography) को प्रस्तुत किया है । जिसमें हमने यथासंभव सहायकग्रंथो के संस्करण भी दिए हैं । यहाँ पत्र-पत्रिकाओं का उल्लेख भी हुआ है, जिनका प्रयोग शोध-प्रबंध में हुआ है और जिन्होंने हमारी सोच और बौधिक परिपकवता को रचा है ।

अंततः यह शोध-प्रबंध विद्वत्जनों के सम्मुख रहा है । हमारी सीमाओं –मर्यादाओं और अल्पज्ञता से हम अभिज्ञ है । अतः गलतियों और दोषों के लिए पहले से ही क्षमाप्रार्थी हैं ।

हमारी परम्परा में माता-पिता का स्थान सर्वोपरि है । मुझमें जो कुछ भी है, वह पाथेय है जो मुझे मेरे माता-पिता की ओर से मिला है । माता-पिता के ऋण से उऋण होना

सौ जन्मों में भी संभव नहीं है। अतःयहाँ इस गुरुकार्य के निमित में अपने माता-पिता के आर्शीवादों की कामना करती हूँ।

माता-पिता के पश्चात दूसरा स्थान हमारे गुरूओं का है। यहाँ में अपने उन तमाम गुरूओं के ऋण को स्वीकार करती हूँ, जिन्होंने मेरे मानसपट के निर्माण के किसी न किसी तरह का योगदान दिया है। यहाँ में गुजराती विभाग के विद्वान प्राध्यापक डॉ. भरत महेता साहब तथा हमारे विभाग के पूर्वअध्यक्ष प्रो. पारुकांत देसाई साहब को भी स्मरण करना चाहूँगी क्योंकि मुझे मैत्रेयी तक पहुँचाने में, मेरे मन में मैत्रेयी के साहित्य के प्रति जो ललक जागी और मैत्रेयी की ओर मेरा जो खिंचाव हुआ उसमें किसी-न किसी तरह का उनका योगदान रहा है।

किन्तु इन सब में अपनी मार्गदर्शिका डॉ.शन्नो पाण्डेय का विस्मरण भला कैसे कर सकती हूँ ? उनेक बारे में वर्णन करने लिए शब्द भी शायद कम पड़ जाए। उनके निर्देश, प्रोत्साहन तथा कभी-कभी सख्त लगनेवाली पर अनुसंधित्सुओं के लिए उपयोगी ऐसी फटकार के बिना यह सारस्वत कार्य संभव नहीं था। उनके मुझ पर अनगिनत उपकार हैं। उनकी शिष्य वत्सलता से सभी परिचित हैं। उनके साथ बिताए शोधकार्य के अमूल्य क्षण मुझे हमेशा याद रहेंगे। यहाँ मैं तहेदिल से उनके प्रति आभार व्यकत करती हूँ।

यह शोधकार्य कला-संकाय के हिन्दी-विभाग में संपन्न हुआ है। अतः विभागाध्यक्षा प्रो. शैलजा भारद्वाज को भी में अपना धन्यवाद ज्ञापित करती हूँ। उन्होंने सदैव मुझे प्रोत्साहित किया है। विभाग के अन्य प्राध्यापक-प्रध्यापिकाओंमे डॉ. कल्पना गवली, डॉ. दक्षा मिस्त्री,डॉ. ओमप्रकाश यादव, डॉ. एन.एस.परमार , डॉ.कनुभाई निनामा, डॉ.माया प्रकाश पांडे, डॉ. अनीता शुकला, डॉ. मनीषा ठक्कर तथा डॉ.जाड़ेजा साहब के प्रति मैं अपनी कृतज्ञता प्रकट करती हूँ।

इस शोधकार्य के दौरान मुझे कई साथी-संगाथी भी मिले, जिनके साथ साहित्यिक चर्चा, विचार-विमर्श संगोष्ठियाँ में भाग लेना जैसी कई महत्वपूर्ण कार्य मैंने हँसी-खुशी किए, भला उन दोस्तों को मैं कैसे भूल सकती हूँ ? उनके साथ गुजरे, ये अमूल्य क्षण आजीवन मेरे स्मृतिपटल पर अंकित रहेंगे। उनमें सगीता चौधरी, कविता ठाकुर, स्मिता पालवा, गौतम पाटणवाडिया, निमिषा मिस्त्री, डॉ. रुपेश प्रजापति, गीता परमार, अपूर्वा जादव, अमीषा शाह, अमित विश्वकर्मा, कमलजीत सिंधा (संस्कृत विभाग) रेणू राजपूत, सचिन पटेल, परेश मकवाणा आदि का भी में धन्यवाद ज्ञापित करती हूँ।

म.स.विश्वविधालय की बी.एड. विभाग में कार्यरत डॉ.जयश्री दास, डॉ.छाया गोयल, प्रो.डी.आर.गोयल सर जिन्होंने मुझे शोधकार्य करने के लिए प्रेरित किया उनका भी मैं धन्यवाद ज्ञापित करती हूँ। हमारे विश्वविधालय के सिंडीकेट सभ्य डॉ. दिनेशसिंह

यादव का भी मैं आभार प्रकट करती हूँ। अंत में मराठी विभाग के डॉ. संजय करंदीकर सर का भी मैं धन्यवाद ज्ञापित करना चाहती हूँ।

इस गुरुकार्य को पूर्ण करते हुए मुझे मेरे घर-परिवार का बहुत सहयोग मिला। मैं मेरे भैया भाभी और छोटी बहन पिंकी का भी आभार प्रकट करती हूँ। बुलबुल सी चहकती मेरे कलेजे की टुकड़ी, वर्षा की रिमझिम नन्ही बूंदो की तरह "नन्ही रिमझिम" जिसे देखकर मेरी थकान दूर हो जाती है, उसको भी मैं यहाँ याद करना चाहूँगी। मेरे छोटे चाचा सत्यदेव यादव जिनका स्वप्न था "शोधकार्य" करना जो कि किन्ही कारणवश अधूरा रह गया और उनका यह स्वप्न परमपिता परमेश्वर की असीम अनुकंपा से मैंने पूर्ण किया अतः मैं मेरे छोटे चाचा का तहेदिल से शुक्रिया अदा करना चाहूँगी।

मेरा यह शोधकार्य विश्वविद्यालय रिसर्च फेलोशीप के आर्थिक सहायता से संपन्न हुआ है। अतः इस प्रक्रिया से जुड़े सभी व्यक्तियों का मैं ऋण स्वीकार करती हूँ। अंत में समकालीन कवियों में सुविख्यात ऐसे सुकांत भट्टाचार्य की निम्न लिखित काव्यपंक्यिों के साथ विरमना चाहूँगी

"है महाजीवन यह कविता अब-
और नहीं,
अबकी बार लाओ कठिन कठोर गद्य
मिट जाए पद लालित्य की झनकार
गद्य के कठोर हथोड़े से करो वार
कविता भी स्निग्धता का अब कोई प्रयोजन नहीं कविते !
आज तुझे छुट्टी दी-
भूख के राज्य में पृथ्वी गद्यमय है
पूर्णिमा का चाँद मानो झुलसी हुई रोटी।
(मैंने अभी-अभी सपनों के बीज बोऐ थे। से साभार)

दिनांक-१५/०६/२०१३

विनीत

पुष्पा यादव
शोध-छात्रा हिन्दी विभाग
म.स.विश्वविधालय.
बड़ौदा -३९००२१.